सल्तनत काल में अहिंसा का स्वरूप (1206-1526 ई.)

अहिंसा एवं शांति अध्ययनविभाग में

एम॰ फिल॰ उपाधि हेतु प्रस्तुत

लघु शोध-प्रबंध

सत्र- 2013-14

निर्देशक

श्री. राकेश मिश्र

सहायक प्रोफेसर

अहिंसा एवं शांति अध्ययन विभाग

शोधार्थी

सुनील राम

अहिंसा एवं शांति अध्ययन विभाग

अहिंसा एवं शांतिअध्ययन विभाग

संस्कृति विद्यापीठ

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997 क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

गांधी हिल्स, वर्धा – 442005 (महाराष्ट्र) भारत

विषय-सूची

	पृष्ठ सं
प्रस्तावना -	(01-04)
अध्याय एक - इस्लाम धर्म में अहिंसा की अवधारणा	(05-20)
1.1 इस्लाम धर्म और भारत में आगमन	(08-13)
1.2 इस्लाम धर्म के नैतिक नियम व कर्तव्य	(13-17)
1.3 इस्लाम धर्म और अहिंसा	(17-20)
अध्याय दो - दिल्ली सल्तनत शासकों का अहिंसात्मक कार्य	(21-45)
2.1 गुलाम वंश	(27-36)
2.2 खिलजी वंश	(36-39)
2.3 तुगलक वंश	(39-44)
2.4 लोदी वंश	(44-45)
अध्याय तीन - अहिंसा और सूफ़ी आंदोलन	(46-70)
3.1 सूफ़ी आंदोलन का इतिहास	(49-55)
3.2 सूफ़ी आंदोलन का सिद्धांत	(56-60)
3.3 सूफ़ी आंदोलन के संत और सामाजिक संदेश	(60-70)
अध्याय चार –अहिंसा और भक्ति आंदोलन	(71-97)

4.1 भक्ति आंदोलन का इतिहास (71-73)

4.2 भक्ति आंदोलन का सिद्धांत व दार्शनिक विचार (74-79)

4.3 भक्ति आंदोलन के प्रमुख संत (80-97)

रामानन्द,कबीर रविदास, गुरुनानक,दादू आदि

अध्याय पाँच – उपसंहार (98-100)

संदर्भ-ग्रंथ सूची (101-102)

प्रस्तावना-

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में दिल्ली सल्तनत काल 1206 से 1526 ई. के बीच माना जाता है। दिल्ली सल्तनत काल को इसके तुर्क-अफगान शासकों ने एक इस्लामिक राज्य घोषित किया था। इस्लाम का राजनैतिक सिद्धांत तीन प्रमुख आधारों पर आधारित था,1-एक धर्म ग्रंथ 2-एक संप्रभु 3- एक राष्ट्र। एक धर्म-ग्रंथ कुरान था, सम्प्रभु इमाम, नेता तथा खलीफा था और राष्ट्र मिल्लत(मुस्लिम-भाई चारा)था। दिल्ली सुल्तातानों की नीति पर धर्म का प्रभाव रहा और कम या अधिक मात्रा में इस्लाम धर्म के क़ानूनों का पालन करना उनका कर्तव्य रहा। यद्यपि जब एक बार इल्तुतमिश ने अपने वजीर मुहम्मद जुनैदी से इस्लामिक क़ानूनों को पूरी तरह लागू करने को कहा, तब उसने उत्तर दिया कि भारत में मुस्लिम समुद्र में बूँद के समान हैं अत: यहाँ इस्लामिक क़ानूनों को पूरी तरह लागू नहीं किया जा सकता है। इसी आधार पर सल्तनत शासकों ने कुछ अहिंसात्मक कार्य किया, जैसे- मुहम्मद बिन तुगलक, फिरोज तुगलक व बहलोल लोदी आदि।

तुर्क आधिपत्य काल में जब देश का जन-जीवन घुटन का अनुभव कर रहा था, तब भक्ति आंदोलन व सूफ़ी संतों द्वारा आंदोलन के माध्यम से सामाजिक संदेश फैलाने तथा सुधारवादी राजनीति का उन्माद पैदा करने का काम किया गया। प्रेम और उदारता सूफ़ी और भक्ति आंदोलन के मूल भाव हैं। दोनों की रहस्यवादी भावना सयुक्त रूप से व्यक्ति और सामाज की वर्ग, धन, शक्ति और पद के अवरोधों से ऊपर उठकर उनकी नैतिक उन्नति में योगदान दिया। दोनों ही समानान्तर धार्मिक आंदोलनों कि प्रमुख विशेषता यह थी कि इन्होंने समाज के सैद्धांतिक विश्वासों, कर्म-काण्डों, जातिवाद तथा सांप्रदीयक घृणा और इसी प्रकार कि अन्य बुराइयों से मुक्त कराया। ये दोनों ही आंदोलन लोकतांत्रि आंदोलन थे, जिन्होंने जन भाषा में सामान्य धर्म का प्रचार किया। इन्हें न तो कोई राजनीतिक संरक्षण मिला और न ही इन पर राजनीतिक गतिविधिओं का प्रभाव पड़ा।

भक्ति आंदोलन हिंदुओं का सुधार वादी आंदोलन था। इसमें ईश्वर के प्रति असीम भक्ति, ईश्वर कि एकता, भाई-चारा, सभी धर्मों की समानता तथा जाति व कर्मकांडों की भर्त्सना की गयी। सल्तनत काल में अनेक भक्ति कालीन संत हुये, जो हिन्दू-मुस्लिम एकता के हिमायती थे। जिसमें

रामानन्द, कबीर, रविदास,गुरुनानक, दादू आदि थे। रामानन्द वाह्य आडंबरों का विरोध करते हुये मानव प्रेम पर बल दिये। इन्होंने जाति-प्रथा का विरोध करते हुये अनेक निम्न जाती के लोगों को अपना शिष्य बनाया। कबीर हिन्दू-मुस्लिम समन्वय के पैगंबर थे, इनके विचारों का संग्रह साखी, सबद, रमैनी द्वारा हिंदुओं और मुसलमान दोनों को मानव ता का संदेश दिये। वे हिन्दू और मुसलमान में कोई अंतर नहीं मानते थे। वे कहा करते थे- "कबीर हिन्दू और मुसलमान दोनों का पुत्र है।" आगे इन्होंने कहा कि- "यदि तुम कहों कि मैं हिन्दू हूँ तो सत्य नही, और न मैं मुसलमान हूँ मेरे लिए मक्का ही काशी हो जाता है और राम ही रहीम बन जाता है।" उनकी मान्यता थी कि परमेश्वर एक ही है, उसे सिर्फ राम, रहीम, अल्लाह, हरि, खुदा और गोविंद आदि अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है।

गुरु नानक (1469-1538ई.) का एकेश्वर वाद और मानव मात्र की एकता उनका मौलिक सिद्धान्त है। इन्होंने कहा- "ना कोई हिन्दू ना कोई मुसलमान। ईश्वर एक है ,वह निर्गुण और निराकार हैं ।" इन्होंने मुसलमानों को सलाह दी- "दया की मस्जिद बनाओ।" नानक ईश्वर की एकता में विश्वास करते थे। इसी आधार पर वे मुसलमानों और हिंदुओं को नजदीक लाने का प्रयास किए। रविदास रामानन्द के शिष्यों में से एक थे। इनके अनुसार मानव सेवा ही जीवन में धर्म की सर्वोत्कृष्ट अभिव्यक्ति का माध्यम है। दादू जो धर्म-ग्रंथ की सत्ता में नहीं बल्कि आत्मज्ञान के महत्व में विश्वास करते थे। इन्होंने ईश्वरी भक्ति को समाज सेवा एवं मानवतावादी दृष्टि से सम्बद्ध किया। "ईश्वर के सम्मुख सभी स्त्री-पुरुष, भाई-बहनो की भांति हैं।" उनकी शिक्षा थी- "विनयशील बनो तथा अहम से मुक्त रहो।"

सूफीवाद इस्लाम के भीतर एक सुधारवादी आन्दोलन के रूप ईरान में शुरू हुआ था, जिसमें शिया और सुन्नी संप्रदायों के मतभेदों को दूर करने का प्रयास किया गया। 12वीं शताव्दी में अनेक सूफी संत भारत आए और अपने सामाजिक संदेशों को इन्होंने फैलाया। सूफीवाद का आधार प्रेम और भक्ति है। इनका प्रमुख उद्देश्य मानव की सेवा करना। आईने-अकबरी में अबुल फजल ने चौदह सूफी सिलसिलों का उल्लेख किया है, जिसमें चिश्ती, सुहरावर्दी, कादिरी और नक्शवंदी अत्यंत प्रसिद्ध रहें । सल्तनत काल में चिश्ती व सुहारावर्दी अधिक लोकप्रिय थे। इन्होंने मानव सेवा को प्रधानता दी तथा धर्म, जाति, जन्म आदि के भेद-भाव को त्यागकर समस्त मानव समाज को एक

माना। इन सूफी संतों में ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती (1143-1236), कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी(1186-1236), शेख हमीदउद्दीन नागौरी, शेख फरीदुद्दीन गज-ए-शंकर(1175-1265), शेख निज़ामुद्दीन औलिया(1236-1325)। सुहरावर्दी संप्रदाय के संत शेख बहाउद्दीन जकारिया आदि। सूफ़ी संत रहस्यवादिता के माध्यम से ईश्वर और व्यक्ति के बीच सीधा संपर्क स्थापित करते थे। सूफिवाद का आधार भक्ति और प्रेम था जिसका उद्देश्य मानवाता की सेवा था।

अत: इस प्रकार दिल्ली सल्तनत काल में अहिंसा के तत्व विद्यमान हैं। जिसे सल्तनत कालीन शासकों के अहिंसात्मक कार्य और सूफी और भक्ति आंदोलन में छानबीन करने की जरूरत है। जिससे सल्तनत कालीन अहिंसा के स्वरूप की दशा, स्थिति एवं उसके महत्व को सुनिश्चित और सार्वजनिक किया जा सके। इस दृष्टि से इस दिशा में एक सफल प्रयास की आवश्यकता है।

शोध का उद्देश्य-

दिल्ली सल्तनत काल में अहिंसा के स्वरूप का विचार करते हुये उसके विभिन्न स्वरूप को रेखांकित करना तथा शासकों के अहिंसात्मक काटी व सूफी आंदोलन और भक्ति आंदोलन में अहिंसा के तत्व का छानबीन करना इस शोध प्रबंध का प्रमुख उद्देश्य रहेगा।

शोध प्रविधि-

इस शोध कार्य हेतु शोधकर्त्ता द्वारा अपने शोध विषय में संबन्धित तथ्यों व सूचनाओं को संकलित करने में विश्लेषणात्मक, व्याख्यात्मक, आलोचनात्मक, तुलनात्मक प्रविधियों का प्रयोग किया गया है।विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि के अंतर्गत शोधार्थी ने सभी तथ्यों का विश्लेषण व विवेचन करके सत्य के कसौटी पर जाँचा परखा गया तदोपरांत उन तथ्यों को अपने शोध प्रबंध में उल्लेख किया गया है । व्याख्यात्मक शोध प्रविधि के अंतर्गत शोधार्थी ने विषय से संबन्धित द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध प्रबंध में पुस्तक, सबंधित पत्र-पत्रिकाएँ आदि का प्रयोग किया गया है ।

परिकल्पना-

मध्यकालीन भारत के इतिहास में खासकर 'सल्तनत काल'में अहिंसात्मक तत्व मौजूद है, जिसको हमने सल्तनत कालीन शासकों के शासन में जनता के साथ जो व्यवहार किया गया था, जिस कारण शोधार्थी की सोच वहाँ तक पहुंची। वह था सूफी व भक्ति आंदोलन,जिनका मुख्य उद्देश्य मानवता की सेवा करना था। इस कारण हमने सल्तनत काल में अहिंसात्मक तत्व खोजने का प्रयास किया है।

उपसंहार

अहिंसा का दर्शन और व्यवहार वर्तमान समय की मुख्य आवश्यकता है। यह सत्य है कि आज अहिंसा की प्रासंगिकता पूर्वकलों से अधिक है। वैयक्तिक,पारिवारिक, सामाजिक,राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सभी स्तरों पर घृणा और कलह जब तक व्याप्त है तब तक समरस्ता के लिए और मानव सहित सभी जीवन रूपों के अस्तित्व के लिए एक शांतिदायक और शमनकारी दृष्टिकोण की अति आवश्यकता है। साथ ही इस पृथ्वी को लालच, शोषण और अतिरेकपूर्ण दोहन से बचाने की दृष्टि से अहिंसा एक वैकल्पित स्थायी आर्थिक प्रतिरूप प्रदान करती है। अहिंसा की एक और मुख्य भूमिका पर्यावरण को और अधिक विकृति और बिनाश से बचाने की है।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास के सल्तनत काल (1206-1526 ई.) में सल्तनत कालीन शासक, सूफी व भक्ति आंदोलन में अहिंसात्मक तत्व खोजने का प्रयास किया गया है। सल्तनत काल में हिंदुओं और मुस्लिमों के मध्य सांस्कृतिक और सामाजिक विभिन्नताओं से इनकार नहीं किया जा सकता है। हमने सल्तनत कालीन वास्तविकता को समझने के लिए विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया गया है। मध्यकालीन भारत का राजनीतिक इतिहास जिस तरह से लिखा जाता है, उस तरह लिखने में एक सुविधा की बात यह है कि सूचना के स्रोत या समकालीन इतिहासकारों की कृतियाँ फौरन सुलभ हो जाती हैं और उनका विषय भी प्राय: एकांतत: दरबार का इतिहास है। इसके उदाहरण के लिए है- जियाउद्दीन बर्नी का तारीख ए-फिरोजशाही। किन्तु इन समकालीन कृतियों को उपयोग में लाने से पहले शायद ही इनके स्वरूप का विश्लेषण किया गया।

हम सूचना के लिए जिन समकाली इतिहासकारों का पर निर्भर रहते हैं, उनके बारे में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि वे सभी या राजदरबारी या उस पद के आकांक्षी थे। इसलिए वे दरबार के एक न एक गुट से जुड़े हुए थे। फलत: राजदरबार पर ही उनका ध्यान केन्द्रित था और उन लोगों ने जिन घटनाओं का वर्णन किया है, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उसी से संबंध है। सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी का ही मिसाल लीजिए। उसने बगावती हिन्दू जमीदारों को ही कुचलने के लिए ही नहीं, बल्कि मुस्लिम इक्तादारों को भी कुचलने के लिए कुछ कड़े कदम उठाये और इन इक्तादारों में ऐसे नितांत धार्मिक लोग भी शामिल थे, जिन्हें बगावत से कुछ लेना देना नहीं था।पर उसे हिंदुओं के

प्रति सर्वथा असहिष्णु धर्मोन्मादी के रूप में चित्रित किया जाता है, हालांकि उसके समकालीन इतिहासकार बर्नी का रोना है कि आलाउद्दीन खिलजी ऐसा सुलतान था, जिसे शरीयत की जरा भी परवाह नहीं रहती थी, चाहे वह राज्य के मामले में हो या निजी जिंदगी के मामले में।

किन्तु हम देखते हैं कि सल्तनत कालीन शासकों ने अपनी हिन्दू व मुस्लिम प्रजा के साथ समान व्यवहार करते थे। मिनहाज-उस सिराज ने इल्तुतमिश के संबंध में कहा है कि "उसके समान धर्म परायण, दयालुता तथा महात्माओं या विद्वानों का सम्मान करने वाला दूसरा कोई शासक नहीं हुआ।" बलबन कहा था कि ईश्वर एक व्यक्ति को सुल्तान का पद इसलिए प्रदान करता है कि ताकि वह प्रजा के कल्याण के लिए कार्य करे और अपने कर्तव्यों के प्रति सदा सजग रहें। इसी प्रकार मोहम्म्द तुगलक भी मुस्लिम प्रजा के साथ-साथ हिन्दू प्रजा के साथ सहिष्णुता का व्यवहार किया। इसी कारण बर्नी ने सुल्तान को अधर्मी घोषित किया था। लोदीयों का राजत्व सिद्धान्त समानता पर आधारित था। आर. पी. त्रिपाठी के अनुसार लोदी शासकों का राजत्व सिद्धान्त अफगान सरदारों के समानता पर आधारित था।

मध्य कालीन भारतीय इतिहास में सूफी आंदोलन ने सम्पूर्ण समाज को प्रभावित किया। क्योंकि यह धार्मिक कट्टरता तथा रूढ़िवादिता के विरुद्ध थे। इन्होंने भारतीय समाज में प्रचलित कर्मकाण्डों तथा कुप्रथाओं का विरोध किया। इन्होंने अन्य धर्मावलम्बियों के साथ दयालुता तथा प्रेम का व्यवहार किया, जिसके कारण इस्लाम के अतिरिक्त अन्य धर्म के अनुयायी भी इन सूफियों को आदर प्रदान करने लगे। इन सूफी मजारों पर हिन्दू मुसलमान सभी एक होकर अपने - अपने मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए तीर्थ यात्राएं करने लगे। इन मजारों पर हिन्दू मुसलमान सभी अपने धार्मिक भेदभाव एवं छुआछूत को त्यागकर समता तथा भ्रातृत्व के सूत्र में बंध जाते हैं।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में भक्ति आंदोलन का अत्यधिक महत्व है, इसने न केवल तत्कालीन मानव के धार्मिक जीवन को ही नहीं परिवर्तित किया, वरन सामाजिक जीवन को भी प्रभावित किया। भक्तिकालीन संतों के बारे में खासकर निर्गुण संतों के बारे में यह कहना उचित होगा कि वे किसी पूर्व नियोजित विचारधारा को निर्धारित कर अपने उपदेश नहीं दे रहें थे बल्कि सच्चे तौर पर वे साधक थे ईश्वर प्रेम के। संतों के हृदय में शायद ही यह विचार ही न रहा हो कि वे

एक धर्म संस्थापक होकर समाज की खाईयों को पाटना चाहते थे। उनका मुख्य उद्देश्य भक्ति था और इसके रास्ते में आने वाले बंधनों का चाहे वे धर्म, समाज, वर्ण अथवा सांप्रदायिकता ही क्यों न हो, उन्होंने डटकर मुक़ाबला किया। संतों को समाज के आर्थिक व धार्मिक विषमाताएँ असहनीय थी। क्योंकि उन्होंने मानवीय एकता को पहचान लिया था। धर्म को वर्ग विशेष की पैतृक संपत्ति समझने वाले ब्राह्मणों और मुल्लाओं से लोहा लेकर जन समाज तक पहुंचाने का श्रेय संतों को ही है। उन्होंने विरोध किसी व्यक्ति विशेष का नहीं अपितु उसकी बुराइयों का विरोध किया। उन्होंने जन समाज को न केवल ईश्वर के प्रेम से परिचित कराया अपितु धार्मिक व सामाजिक और राजनीतिक कलह से पिसती जनता को प्रेरित कर नवीन स्फूर्ति प्रदान की। मध्यकालीन भक्तों ने सफलता पूर्वक समाज और धर्म से बनी खाइयों को अपनी मधुर वाणियों से पाटा तथा व्यक्तिगत चरित्र व चिंतन को सामाजिक व धार्मिक परम्पराओं से अधिक महत्व दिया।